Historicity Research Journal
ISSN : 2393-8900

Impact Factor : 1.9152 (UIF)
Volume - 3 | Issue - 10 | June– 2017

नेहरू और समाजवादी चिन्तन का विकास

डॉ. सरोज कुमार
इतिहास विभाग,
जय प्रकाश विश्वविद्यालय छपरा सारण बिहार.

प्रस्तावनाः-

एक गुलाम देश में समाजवादी चिन्तन की प्रक्रिया का तेज गति विकास बहुत अर्थों में उस देश के मुक्ति संघर्ष की चारित्रिक विशेषता पर निर्भर करता है – इस बात पर निर्भर करता है कि मुक्ति संघर्ष का नेतृत्व करनेवाली राजनीतिक विचारधारा कौन सी है – पूंजीवादी या समाजवादी। भारत की विडम्बना यह थी कि यहां राष्ट्रीय आन्दोलन भारत के उद्दीयमान पूंजीपति वर्ग और उनका उच्च मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी वर्ग के द्वारा शुरू किया गया था और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस उन्हीं के स्वार्थों का प्रतिनिधित्व करनेवाली राजनीतिक पार्टी थी जो राजनीतिक समूह कांग्रेस नेतृत्व पर हावी थे और मुख्यतः भारतीय पूंजीपति वर्ग के हितों को आगे बढ़ाते थे, वही जन–मुक्ति आन्दोलन पर भी अपना नियंत्रण बनाये रहे। फिर भी, इस आंदोलन के भीतर एक वामपंथी राष्ट्रवादी, अंशतः क्रांतिकारी जनवादी धारा भी विकसित होने लगी तथा मार्क्सवाद–लेनिनवाद के विचारों को अपेक्षाकृत अधिकाधिक सुसंगत रूप में आत्मसात करनेवाली धारा भी उभर आयी।

रूस की 1917 की समाजवादी क्रांति का प्रभाव जिन रूपों में खास तौर पर देखने में आया, वे इस प्रकार थे : तीसरे और चौथे दशकों में पूर्वोक्त धाराएं विकसित होने लगी। उपनिवेशवाद–विरोधी संघर्ष में आम गरमपंथी रूझान पैदा हो गया, उस संघर्ष में जनता को अगले मोर्चे पर लाने का दायित्व पेश किया जाने लगा तथा मेहनतकशों की सामाजिक मुक्ति के कार्यक्रमों तथा समाजवादी नारों और आदर्शों का प्रचार–प्रसार होने लगा।

समाजवाद के विचार की ओर झुकाव भारतीय मुक्ति आंदोलन की प्रगतिशील परम्पराओं के विकास के गुणात्मक दृष्टि से एक नये चरण का द्योतक था। इसकी जनवादी परम्पराओं का प्रतिनिधित्व बाल गंगाधर तिलक, स्वामी विवेकानन्द, विपिनचन्द्र पाल, अरविन्द घोष, लाला लाजपत राय, भूपेन्द्रनाथ दत्त, हरदयाल, वीरेन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय, रुस्तम कामा, श्यामजी कृष्ण वर्मा आदि जैसे 19वीं सदी के अंतिम और 20वीं सदी के आरम्भिक दिनों के प्रमुख राजनीतिक नेता थे।

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के क्रम में उत्पन्न समाजवादी वैचारिकता के प्रति कांग्रेस के जिस समूह ने अपनी आस्था व्यक्त करते हुए उसे एक निर्णायक सिद्धांत के रूप में स्वीकार किया था उस वैचारिकता को नेहरू ने भी स्वीकारा।

नेहरू जी ने 1928 में ही 'स्वराज और समाजवाद' शीर्षक अपने एक लेख में अपनी यह आस्था व्यक्त की थी कि भारत में ब्रिटिश प्रभुत्व के खिलाफ संघर्ष 'न केवल राष्ट्रवादी आधार पर' चलाया जाना चाहिए बल्कि उसमें मेहनतकशों की सामाजिक और आर्थिक मुक्ति के विचारों को भी सम्मिलित किया जाना चाहिए। उनकी राय थी कि स्वराज (स्वाधीनता) के नारे को अमूर्त नहीं होना चाहिए। ऐसा कुछ नहीं होना चाहिए जिनका मेहनतकशों अर्थात् किसानों, भूमिहीन ग्रामीण मजदूरों, कारखाना मजदूरों, दुकानदारों और दस्तकारों के लिए अभिप्राय अस्पष्ट हो। नेहरू जी ने जोर देते हुए कहा कि अगर समाज के सामाजिक ढांचे में परिवर्तन लाये बगैर राज्यसत्ता का भारतीयकरण कर लिया जाता है तो उससे जनता के रहन–सहन के स्तर में सुधार नहीं होगा। इसलिए नेहरू जी ने कहा कि स्वाधीनता के संघर्ष के लिए जन–समर्थन प्राप्त करने के लिए 'हमें जनता

के लिए एक आर्थिक कार्यक्रम स्पष्ट रूप में प्रस्तुत करना चाहिए, जिसका आदर्श समाजवाद हो। हमें अवश्य ही क्रांतिकारी दृष्टिकोण पैदा करना चाहिए।

अपनी इस अवधारणा के आधार पर नेहरू इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि पूंजीवाद अस्वीकार्य है क्योंकि इसका अनिवार्य परिणाम होता है उपनिवेशवादी और साम्राज्यवादी शोषण। उनके विचार में भारत के सामने पेश समस्याओं का सर्वांगीण समाधान समाजवाद में ही संभव है। उन्होंने लिखा है कि पूंजीवाद का अनिवार्य परिणाम होता है एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति का, एक समूह द्वारा दूसरे समूह का और एक देश द्वारा दूसरे देश का शोषण। इसलिए अगर हम इस साम्राज्यवाद और शोषण के विरोधी हैं तो हमें पूंजीवाद का भी विरोधी होना चाहिए। हमारे सामने जो एकमात्र विकल्प पेश है वह है समाजवाद का कोई न कोई रूप।'[1]

1933 में भी नेहरू ने अपनी एक कृति में जोर देकर कहा कि राष्ट्रीय मुक्ति का सामाजिक मुक्ति से घनिष्ठ संबंध है – राजनीतिक स्वतंत्रता का राष्ट्रवादी संघर्ष धीरे–धीरे आर्थिक स्वतंत्रता के लिए संघर्ष में भी बदलता जा रहा है।[2]

इस प्रकार नेहरू राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन के प्रति एक ऐसा दृष्टिकोण अपनाते थे जो मूलगामी सामाजिक बदलावों को भी अपने में शामिल करता था और स्वभाव में जनवादी भी था।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के 1936 के अधिवेशन में नेहरू जी ने रेखांकित किया कि राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन का अंतोगत्वा समाजवाद के लिए आंदोलन में विकसित हो जाना संभव और अभीष्ट है : 'आज कांग्रेस भारत में पूर्ण लोकतंत्र का समर्थन करती है और लोकतांत्रिक राज्य के लिए लड़ती है नकि समाजवाद के लिए। यह साम्राज्यवाद विरोधी है और हमारे राजनीतिक और आर्थिक ढांचे में महान परिवर्तनों के लिए संघर्षरत है। मैं आशा करता हूं कि घटनाओं का तर्क समाजवाद की ओर ले जाएगा।[3]

ऐसी अवधारणाओं ने नेहरू की वैचारिकता पर एक ऐसा प्रभाव डाला जिससे वे धीरे–धीरे यह महसूस करने लगे कि राष्ट्रवादी सिद्धांत संकीर्ण और अपर्याप्त होता है। उन्होंने स्वाधीनता और मेहनतकशों की सामाजिक मुक्ति के लिए तथा समाजवादी समाज की स्थापना के लिए एक साथ संघर्ष करने के महत्व से संबंधित अपनी एक केन्द्रीय स्थापना संचित की और इसी में नेहरू जी के विचारों तथा गांधी जी द्वारा प्रतिपादित विचारों के बीच का अंतर निहित किया। नेहरू जी ने लिखा – मेरा दृष्टिकोण अपेक्षाकृत अधिक व्यापक था और मुझे राष्ट्रवाद अपने–आप में निश्चित रूप में एक संकीर्ण और अपर्याप्त सिद्धान्त प्रतीत होता था। राजनीतिक स्वतंत्रता, स्वाधीनता निःसंदेह आवश्यक थे किन्तु वे सही दिशा क्रम में कदम रखते थे, सामाजिक स्वतंत्रता तथा समाज और राज्य की समाजवादी किस्म की संरचना के बिना न तो देश का और न व्यक्ति का पर्याप्त विकास हो सकता था।[4]

साथ ही नेहरू जी ने उस अभिभाषण में इस बात पर भी जोर दिया कि भारत को समाज का स्वयं अपना, विशिष्ट रूप खोजना चाहिए जो राष्ट्रवादी सिद्धान्त की 'संक्रीणता से मुक्त होते हुए भी राष्ट्रीय परम्पराओं और सांस्कृतिक विरासत पर आधारित हो। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि भारत समाज के समाजवादी पुनर्गठन की स्वयं अपनी विधियों का निरूपण करे और इस आदर्श को भारतीय जाति की प्रतिमा के अनुरूप ढाले।

कांग्रेस के लखनऊ अधिवेशन, 1936 में नेहरू ने अपनी समाजवादी अवधारणा का विषद् विवेचन किया और अपनी राय जाहिर की। उनकी राय में विश्व की समस्याओं और भारत की समस्याओं के समाधान की एकमात्र कुंजी समाजवाद में निहित है। नेहरू जी ने स्पष्ट किया कि वे समाजवाद शब्द का प्रयोग एक वैज्ञानिक, आर्थिक अर्थ में कर रहे थे किन्तु उनके लिए समाजवाद 'एक आर्थिक सिद्धान्त से बढकर कोई चीज भी है। उन्होंने रेखांकित किया – 'मुझे भारतीय जनता की गरीबी, बेहिसाब बेरोजगारी, हीनता और दासता को समाप्त करने का कोई रास्ता नहीं नजर आता और फिर आगे कहा कि समाजवाद का अर्थ है राजनीतिक और सामाजिक ढांचे में 'विराट और क्रांतिकारी परिवर्तन लाना', कृषि और उद्योग में विशेषाधिकार–सम्पन्न समूहों को समाप्त करना, भारतीय रियासतों की सामंती और स्वेच्छाचारी प्रणालियों का उन्मूलन करना। उन्होंने और आगे कहा – 'इसका अर्थ है निजी सम्पत्ति को सीमित अर्थ में छोड़कर उसका खात्मा करना तथा वर्तमान मुनाफा प्रणाली के स्थान पर सहकारी सेवा के एक उच्चतर आदर्श की प्रतिष्ठापना करना। इसका अर्थ है वर्तमान पूंजीवादी व्यवस्था से आमूल भिन्न एक नयी सभ्यता। इस नयी सभ्यता की कुछ झलकियां हम सोवियत संघ के प्रदेशों में पा सकते हैं।[5]

इन कर्तव्यों के निर्वाह के लिए मूलगामी आर्थिक उपाय स्थापना के तरफ ले जा सकती है।

सोवियत राष्ट्रसंघ रूस का प्रभाव – नेहरू के समाजवादी विचारों को अक्टूबर क्रांति और सोवियत रूस से काफी प्रभावित किया था। अक्टूबर क्रांति और उसके बाद के परिवर्तनों ने उन्हें निःसंदेह वैज्ञानिक समाजवाद के संस्थापकों की कृतियों तथा सोवियत संघ में किये जा रहे समाजवादी कायाकल्प के अनुभवों का सावधानी से अध्ययन करने को प्रेरित किया। उन्होंने लिखा – ''मार्क्स और लेनिन के अध्ययन का मेरे मन पर जबरदस्त असर हुआ और उससे मुझे इतिहास और सांप्रतिक घटनाक्रम को एक नयी रोशनी में देखने में मदद मिली। ऐसा दिखायी पड़ने लगा कि इतिहास और सामाजिक विकास के लम्बे सिलसिले में कुछ अर्थ, कुछ क्रमबद्धता है और भविष्य की अस्पष्टता का कुछ धुंध छंट गया। सोवियत संघ की व्यावहारिक उपलब्धियां भी अत्यन्त प्रभावशाली थीं। सोवियत क्रांति ने मानव समाज को एक लम्बी छलांग के साथ आगे बढ़ा दिया था और एक ऐसी चमकदार मशाल जला दी थी जिसे बुझाया नहीं जा सकता, ...उसने ऐसी नयी सभ्यता की नींव रख दी थी जिसकी ओर संसार आगे बढ़ेगा।[6]

फिर भी नेहरू ने वैज्ञानिक समाजवाद की स्थितियों को नहीं अपनाया और उनकी कई अवधारणाएं जैसे समाजवादी क्रांति के सार तत्व के रूप में सर्वहारा का अधिनयक के सिद्धान्त को नहीं अपनाया। सोवियत संघ में लाए गए सारे परिवर्तनों को उन्होंने नहीं अपनाया किन्तु उनकी यह अस्वीकृति इस बात पर जोर देने में बाधक नहीं बनी कि भारत के प्रगतिशील, जनतांत्रिक चेतना वालो लोगों के लिए विश्व के प्रथम समाजवादी राज्य द्वारा पेश की गयी प्रेरणाप्रद मिसाल का क्या महत्व है। उन्होने लिखा – सबसे बढ़कर हमारे सामने सोवियत संघ का उदाहरण है जिसे युद्ध और गृहयुद्ध से भरे दो संक्षिप्त दशकों में और अलंघ्य प्रतीत होनेवाले कठिनाईयों को झेलते हुए आपार प्रगति की है।

उन्होंने सोवियत उपलब्धियों को महत्वपूर्ण माना और कहा आज हमारे भारत में हमारी समस्याएं वहीं हैं जो कुछ साल पहले रूस के सामने पेश थी और उन्हें इसी तरह हल किया जा सकता है जैसे रूसियों ने अपनी समस्याओं को हल किया। हमें अपने देश को उद्योगकृत और शिक्षित करने के तरीके के मामले में सोवियत संघ से शिक्षा लेनी चाहिए।

ऐसे वैचारिक भटकावों का असर भविष्य के भारत की आर्थिक– सामाजिक पुर्नसरचना पर जिस तरह से पड़ा वह सुखद नहीं रहा। इसने समाजवादी वैचारिकता पर काफी चोट हुआ। इससे प्रमाणित हो रहा था कि भारत में वर्ग–अन्तविरोध और टकराव बढ़ते जा रहे थे। सम्पति धारी वर्ग हिंसा का सहारा लेने लगे और मेहनतकश आवाम के विरोध को हिंसा के द्वारा कुचलने में राजसत्ता का उपयोग करने लगे थे। उदाहरण था – पांचवें दशक के उत्तरार्द्ध में तेलांगना के प्रचंड किसान आंदोलन को सरकारी सैनिकों ने निर्ममतापूर्वक कुचल डाला। 1959 में केरल की विधि के अनुसार निर्वाचित कम्युनिस्ट नेत्त्व वाली सरकार को असंवैधानिक और मूलतः हिंसात्मक ढंग से उखाड़ फेंकने की कार्रवाई का संयोजन करने में व्यक्तिगत रूप में स्वयं नेहरू जी ने हाथ बंटाया। हड़ताली मजदूरों और भूस्वामियों के क्रूरतापूर्ण दमन से अपनी रक्षा करने की कोशिश करने वाले ग्रामीण गरीबों–हरिजनों के खिलाफ पुलिस बल प्रयोग करती रही है। पूंजीवादी राज्य द्वारा हिंसा का सहारा लिए जाने के और भी बहुत–से उदाहरण दिए जा सकते हैं।

देश के विकास को नियोजन के आधार पर त्वरित करने के उद्देश्य से सामाजिक आर्थिक सुधार लाने के विचार को नेहरू ने फिर से उठाया। इन योजनाओं को पूरा करने में जनता की भागीदारी पर जोर दिया और इसे गरीबी और अज्ञानता के खिलाफ लड़ा जानेवाले एक युद्ध के रूप में रखा। वास्तविक प्रगति का लक्ष्य औद्योगिकीरण से जोड़ा और इससे सार्वजनिक क्षेत्र की भूमिका पर बल दिया। उन्होंने लिखा – हमें विश्वास है कि देश के वास्तविक उद्योगीकरण की नींव भारी उद्योग को, मेरा मतलब लोहा और इस्पात के अलावा मशीनों का निर्माण करनेवाले उद्योगों को होना चाहिए।

समाजवादी विकास के प्रति आस्था को संजोये रखने के बाद भी नेहरू की कार्यनीति इजारेदारियों के विकास को नहीं रोक सकी। इस विकास के सबसे महत्वपूर्ण कारण थे नेहरू द्वारा कतिपय महत्वपूर्ण समाजवादी तत्वों और सिद्धांतों को अस्वीकार करना। मिश्रित अर्थतंत्र के ढांचे पर इस कारण जो बहस छिड़ी वह एक राष्ट्रव्यापी बहस का रूप ले लिया और दोनों क्षेत्रों के परस्पर संबंधों पर जब चर्चा की जाने लगी तब 1959 में नेहरू ने कहा कि – मैं यह कतई स्वीकार नहीं करता कि निजी क्षेत्र जनतंत्र का आवश्यक अंग है। सही नीति होगी यह महसूस करना कि सार्वजनिक क्षेत्र, बुनियादी क्षेत्र एक रणनीतिक अस्त्र और आगे बढ़नेवाला क्षेत्र है और इसके बावजूद निजी क्षेत्र के लिए विशाल क्षेत्र खाली है। एक अन्य अवसर पर उन्होंने रेखांकित किया कि निजी क्षेत्र को देश के विकास में भूमिका तो अदा करनी है मगर उसे नियंत्रणाधीन होना चाहिए जिससे चंद

लोगों के हाथों में धन–सम्पदा और आर्थिक सत्ता का संचय रोका जा सके। उन्होंने कहा हमें निजी सम्पदाओं को जमा किए जाने में दिलचस्पी नहीं है क्योंकि इससे असमानता बढ़ती है।

नेहरू के वैचारिक भटकाओं का परिणाम ही था कि 1963 में समाजवाद और राष्ट्रीयकरण शीर्षक लेख में नेहरू विवश दिखे और उन्होंने लिखा कि भारत की आर्थिक वृद्धि के हित को ध्यान में रखते हुए 'आज अथवा निकट भविष्य में' उद्योग का पूर्ण राष्ट्रीयकरण गलत होगा। मेरा व्यक्तिगत विचार यह है कि एक निजी क्षेत्र रखने और उसे बढ़ावा देने तक के अलावा हमारे लिए और कोई रास्ता नहीं है। हमें निजी क्षेत्र रखना होगा, हमारे पास इस सतय कर्मीदल की दृष्टि लागू करने के बाद भी जमीन की पर्याप्त उपलब्धि कराने की समस्या का हल नेहरू ने सहकारी खेतों में ढूंढ़ा था। उनकी राय में जबतक छोटे–छोटे किसान अपनी ही तरह के दूसरे लोगों के साथ सहकार में काम न करें तबतक उसके लिए आधुनिक तकनीकों का और नयी विधियों से प्राप्त सुविधाओं का लाभ उठा सकना असंभव है। सहकार उसकी भावी वृद्धि की कुंजी है और सहकारिता आंदोलन को पूरे देश में फैल जाना चाहिए और इस विशाल देश के सभी गांवों और किसानों को समेट लेना चाहिए।

नेहरू की इसी समझ का परिणाम था कि कांग्रेस ने अपने 1959 में नागपुर अधिवेशन में सहकारिता संबंधी प्रस्ताव पारित किया। भारत में महत्वपूर्ण सामाजिक क्रियाकल्प की योजनाओं के क्रियान्वयन की नेहरू जी की अवधारणा में कृषि सुधार की भूमिका का निर्धारण करने के लिए इस बात पर गौर करना आवश्यक है कि वे कृषक सहकारिता की आवश्यकता को देश में समाजवादी समाज का निर्माण करने के विचार से जोड़ते थे। उन्होंने रेखांकित किया कि जबतक किसानों के पास जमीन के सिर्फ छोटे–छोटे टुकड़े हैं तबतक समाजवाद की तमाम बातें कोरी बकवास हैं।

कांग्रेस पार्टी और उसके द्वारा संचालित राज–व्यवस्था को समाजवादी दिशा देने के ही प्रयोजन से नेहरू ने समाजवादियों को शासन में शामिल होने के लिए आमंत्रित किया। मगर इस प्रयास में विफल होने के बाद नेहरू ने अकेला कांग्रेस को इस दिशा में ले जाने के प्रयास में लगे।

दूसरी और तीसरी पंचवर्षीय योजनाओं ने समाज के समाजवादी प्रारूप पर रूपान्तरण के लिए और भी अधिक प्रतिबद्धता सामने रखी। परन्तु नेहरू ने समाजवाद या समाजवादी प्रारूप को बहुत ही लचीले ढंग से प्रस्तुत किया और मुख्य रूप से उत्पादन बढ़ाने और अर्थव्यवस्था के आधुनिकीकरण करने पर अधिक जोर डाला। दूसरी पंचवर्षीय योजना संसद में प्रस्तुत करते हुए उन्होंने कहा, 'मैं यहां समाजवाद की ठीक–ठीक परिभाषा प्रस्तावित नहीं करना चाहता हूं, ...क्योंकि हम जड़ और कोरे सिद्धांतवादी चिंतन में नहीं पड़ना चाहते हैं।' और तब उन्होंने कहा, 'परंतु यदि छोटे मोटे तौर पर कहा जाए तो हमारा अभिप्राय एक ऐसे समाज से है जिसमें अवसर की समानता हो और प्रत्येक व्यक्ति के लिए एक अच्छा जीवन जीने की संभावना मौजूद हो।

नेहरू की समाजवादी कार्यक्रमों के अभाव में कांग्रेस द्वारा घोषित कार्यक्रमों के बावजूद भी भारत में इजारेदारी का विकास हो गया और इसमें उपनिवेशवादी काल के सामंती अवशेष भी बरकरार रहे। इसका नतीजा हुआ कि स्वाभाविक रूप से वर्ग टकराव तेज होते गए। नेहरू ने कई मौकों पर इस तरफ इशारा भी किया था जैसे 'मिश्रित अर्थतंत्र' की सामाजिक प्रकृति का विश्लेषण करते हुए उन्होंने कांग्रेस के समाजवादी कार्यक्रमों की एक मूल प्रस्थापना पर आपति की थी, जिसके अनुसार सार्वजनिक क्षेत्र की स्थापना के साथ अपने–आप समाजवाद का रास्ता खुल जाना चाहिए। नेहरू जी ने लिखा – 'यह बहुत अधिक राज्य स्तरीय नियंत्रण में कायम पूंजीवादी अर्थतंत्र अथवा सीधे राज्य के अधीन सार्वनिक क्षेत्र के साथ पूंजीवादी अर्थतंत्र है। लेकिन मूलतः यह पूंजीवादी अर्थतंत्र है।

नेहरू जी द्वारा घोषित समाजवादी कार्यक्रमों तथा पूरे छठे और सातवें दशकों में भारत में हुए पूंजीवाद के विकास के बीच के आधारभूत अंतर्विरोधों को नेहरू जी के विचारों और कार्यों के विकास की विवेचना करने वाले भारतीय और पश्चिमी विद्वानों की कृतियों में लक्षित किया गया है।

वाल्टर क्रॉसर, ज्योफ्रे टायसन, मैरी सेटन, बेट्रिस लैब और माइकल ब्रेशर जैसे अमरिकी और ब्रिटिश विद्वानों द्वारा तथा भारतीय पत्रकार चलपति राव द्वारा जो एक जमाने में नेहरू जी के अत्यंत निकट थे, किए गए अध्ययनों में नेहरू जी के समाजवादी विचारों को लेकर कांग्रेस पार्टी के भीतर और बाहर चले विवाद के मुख्य चरणों की छानबीन की गयी है। इन लेखकों ने नेहरू जी के रास्ते की मुख्य उपलब्धियों का विवेचना किया है तथा उनके कार्यक्रमों के अनेक सबसे महत्वपूर्ण प्रावधानों को क्रियान्वित होने से रोकने के लिए देश की और शासक पार्टी के भीतर की प्रभावशाली शक्तियों द्वारा की गयी कोशिशों को वर्णन किया गया।

हीरेन मुखर्जी ने अर्थतंत्र के राज्य स्तरीय क्षेत्र के सुदृढ़ीकरण और विकास का श्रेय नेहरू जी को दिया है। उन्होंने लिखा है कि 'नेहरू युग में बुनियादी उद्योगों के क्षेत्र में उत्पादन के साधनों के सार्वजनिक स्वामित्व की दिशा में ठोस मोड़ आया था। साथ ही उन्होंने लक्षित किया है कि अर्थतंत्र पर 'धन्नासेठों की सत्ता का प्रभुत्व था। फलतः सार्वजनिक क्षेत्र का स्वरूप पूंजीवादी और अर्द्ध–समाजवादी रूपों के बीच एक अस्थिर मोर्चे द्वारा निर्धारित हो रहा था जिसमें पूंजीवादी रूप का निर्विवाद प्रावल्य था। नेहरू जी ने इस बात का काफी प्रयास किया कि समाजवाद, प्रगति और आधुनिकीकरण के विचार कांग्रेस की नीतिविधायक दस्तावेजों में सम्मिलित किया जायें। हीरेन मुखर्जी ने कहा है कि यह बात खासतौर पर 1955 में अवाड़ी में और 1964 में भुवनेश्वर में स्वीकृत प्रस्तावों में देखी जा सकती है।

जो भी हो एक शक्तिशाली सार्वजनिक क्षेत्र की स्थापना के आधार पर औद्योगिकीकरण में तेजी लाने और नियोजन को आगे बढ़ाने में नेहरू जी की सफलता में वैचारिक स्तर पर सोवियत संघ द्वारा समाजवादी निर्माण के अनुभव ने तथा व्यावहारिक स्तर पर विश्व समाजवादी व्यवस्था द्वारा दी गयी आर्थिक सहायता ने योगदान किया। सार्वजनिक क्षेत्र देश के आर्थिक विकास पर निर्णायक प्रभाव डाल सकता था और साम्राज्यवाद और इजारेदार पूंजी के खिलाफ संघर्ष में अधिकाधिक भूमिका अदा कर सकता था।

नेहरू जी की दृष्टि का बहुपक्षीय स्वरूप समाज की सामाजिक– आर्थिक पुर्नसरचना के प्रति उन्नत, अत्यंत प्रगतिशील दृष्टिकोणों तथा सुधारवादी, उदारपंथी–पूंजीवादी विचारों के जटिल और अंतर्विरोधात्मक मिश्रण के रूप में अभिव्यक्त हुआ।

आज भारत के सामने साम्राज्यवाद के नव–उपनिवेशवादी शोषण को स्थायित्व प्रदान करने के लिए वैश्विकरण के जिस प्रक्रिया के चलाया जा रहा है, और उसके सामने डॉ0 मनमोहन सिंह के नेतृत्व में कांग्रेस ने जिस तरह से साम्राज्यवादियों के सामने आत्मसमर्पण कर दिया है, वह नेहरू की महान विरासत के साथ एक ऐसी धोखाधड़ी है जिसे नेहरू के नाम से सम्बद्ध कर चलाया जा रहा है। आजादी पूर्व और आजादी पश्चात् अपने समाजवादी वैचारिकता के लिए कांग्रेस के अंदर और बाहर नेहरू ने संघर्ष की जिस विरासत को खड़ा किया था उसके प्रतिवाद के दिनों में नेहरू की वैचारिकता में कतिपय भटकाव भले आ गए हों मगर उन्होंने राष्ट्र को धोखा नहीं दिया मगर उन्हीं के नाम पर आज कांग्रेस सम्पूर्ण राष्ट्र को एक उल्टी दिशा प्रदान कर रही है और इसे ही नेहरू की विरासत बता रही है। नेहरू की हत्या उनके मरने के बाद की जा रही है और उद्देश्य वही है फांसीवादी दिशा में भारत को ले जाने की क्योंकि जिस धनिक अल्पतंत्र की सत्ता का निर्माण कांग्रेस कर रही है उसकी अंतिम परिणति फांसीवादी के उदय से होती है – इजारेदार पंजी के सबसे घृणित राजनीतिक दर्शन के साथ सत्ता को बांध देने में।

सन्दर्भ–सूची

1. ज्वाहरलाल नेहरू : स्वराज एण्ड सोशलिज्म, संकलित रचनाएं, नयी दिल्ली, 1975, खण्ड–3, पृ0 371
2. सेमिनार ऑन नेहरू, मद्रास, 1974, पृ0 186–187
3. एम0वी0 रमण राव : ए शॉर्ट हिस्ट्री ऑफ दी इंडियन नेशनल कांग्रेस, दिल्ली, 1959, पृ0 180
4. जवाहरलाल नेहरू : आत्मकथा (अंग्रेजी), मॉस्को, 1955, पृ0 203
5. जवाहरलाल नेहरू : संकलित रचनाएं, खण्ड 4, पृ0 511–513
6. नेहरू द्वारा लखनऊ में कांग्रेस के अधिवेशन, 1936 में दिया गया अध्यक्षीय भाषण
7. जवाहरलाल नेहरू : दि बेसिक एप्रोच, वर्ल्ड मार्क्सिस्ट रिव्यू, अंक–2, 1959
8. जवाहरलाल नेहरू : टुवर्ड्स ए सोशलिस्ट ऑर्डर, नयी दिल्ली, 1956, पृ0 64
9. जवारहलाल नेहरू : इंडिया ऑफ टूडे एण्ड टूमॉरो, दिल्ली, 1960, पृ0 36–39
10. नेहरू की रचनाओं और भाषणों के अंश (अंग्रेजी), फरीदाबाद, 1964, पृ0 46
11. कांग्रेस फोरम, खण्ड–1, अंक–3, 1963, पृ0 11–15
12. जवाहरलाल नेहरू : स्पीचेज, भो0 3, 1953–57, दिल्ली 1970, पृ0 96
13. गर्वमेंट ऑफ इंडिया : फॉर्मिंग कमीशन, थर्ड फाइव इअर प्लान, नयी दिल्ली, 1961, पृ0 5
14. ए0आई0सी0सी0 इकोनॉमिक रिव्यू, दिल्ली, 15 सितम्बर 1977, पृ0 6–7
15. चलपतिराव : जवाहरलाल नेहरू, नयी दिल्ली, 1973, पृ0 268–269

    हीरेन मुखर्जी : दि जेन्टल कैलोंसस : ए स्टडी ऑफ जवाहरलाल नेहरू, पृ0 175–176